$= 100 - 9 = 91$ **Answer.**

Similarly, Taruna's PR for 10th Position

$$= 100 - \left(\frac{100 \times 10 - 50}{50}\right)$$

$$= 100 - \left(\frac{1000 - 50}{50}\right)$$

$$= 100 - \left(\frac{950}{50}\right)$$

$= 100 - 19 = 81$ **Answer.**

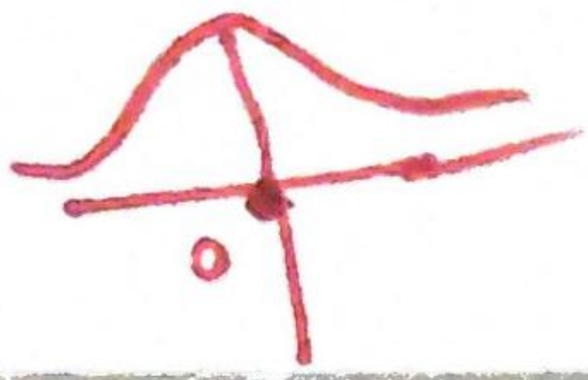

प्रामाणिक अंक
[Standard Scores]

परीक्षाओं का एक उद्देश्य यह भी होता है कि उन पर प्राप्त अंकों के आधार पर परीक्षार्थियों की परस्पर तुलना की जा सके। सामान्यतः विद्यार्थी की विभिन्न विषयों में परीक्षा ली जाती है जिसके अन्तर्गत उसे अंक प्रदान किये जाते हैं। फिर प्रदत्त अंकों को जोड़कर विद्यार्थी का समूह विशेष में स्थान निर्धारित किया जाता है कि कौन-सा विद्यार्थी समूह में सबसे अधिक योग्यता रखता है और कौन-सा विद्यार्थी सबसे कम। इस प्रकार की तुलनात्मक प्रक्रिया तथा ऐसे निर्णय कुछ मुख्य बिन्दुओं पर निर्भर करते हैं। प्रथम तो यह कि जिन मापक परीक्षाओं का प्रयोग किया जाय उनकी मापक इकाइयाँ (Units of Scale) समान होनी चाहियें। उदाहरणार्थ, एक फुट का पैमाना जो छोटी-छोटी इंचों (इकाइयों) में विभक्त है, उसी स्थिति में किसी वस्तु का मापन सही-सही कर पायेगा यदि इस पैमाने के इंच समान हैं। परीक्षण की दृष्टि से इसी तथ्य को दूसरे शब्दों में हम यूँ कह सकते हैं कि मानसिक परीक्षाओं के प्रश्नों का कठिनाई स्तर (Difficulty Level) एक समान होना चाहिए अर्थात्, प्रश्न 1 व 2 में जो अन्तर है, वही कठिनाई अन्तर प्रश्न 2 व 3 में भी होना चाहिए। इसी प्रकार जो कठिनाई अन्तर प्रश्न 5 व 6 में है, वही अन्तर प्रश्न 6 व 7 में होना चाहिये। दूसरे, दोनों परीक्षाएँ समरूप हों। यदि किसी एक विषय में विद्यार्थियों के समूहों को कोई दो भिन्न परीक्षाएँ दी गई हैं तो तुलना की दृष्टि से यह आवश्यक है कि दोनों परीक्षाएँ समरूप (parallel forms) हों। प्रायः ऐसा होना कठिन ही होता है। यदि दोनों परीक्षाएँ एक दूसरे से बहुत भिन्न हैं तो दोनों समूहों की तुलना करनी असम्भव होगी। जैसे—यदि गणित की एक परीक्षा बहुत सरल तथा दूसरी बहुत कठिन है तो इनके आधार पर हम यह नहीं निश्चय कर सकते कि कौन-सा समूह अधिक योग्यता रखता है। यदि एक समूह दूसरे से अधिक योग्यता रखता है और उसको कठिन परीक्षा दी जाती है तो ऐसी स्थिति में निश्चित ही इस समूह के प्राप्तांक दूसरे कम योग्यता वाले समूह से कम होंगे। अतः इस प्रकार की तुलना अर्थहीन समझी जायेगी। तीसरे, परीक्षकों के मूल्यांकन के मानदण्ड (norms) भी समान होने चाहियें। प्रायः लिखित परीक्षाओं में ऐसा होता है कि विभिन्न परीक्षकों के मूल्यांकन तथा निर्णय (Judgements) के मानदण्ड अलग-अलग होते हैं। अतः दो ऐसे विद्यार्थी-समूहों की तुलना नहीं की जा सकती जिनकी परीक्षाओं का मूल्यांकन भिन्न-भिन्न परीक्षकों ने किया है।

Scanned by TapScanner

उपरोक्त सीमाओं के कारण बहुत-सी त्रुटियाँ मापन एवं मूल्यांकन के क्षेत्र में उपस्थित हो जाती हैं तथा अज्ञानतावश बहुत से निर्णय एवं निष्कर्ष गलत हो जाते हैं। इन त्रुटियों को दूर करने के अनेक उपाय साँख्यिकी शास्त्र में सुझाये गये हैं तथा अधिकतर रीतियों का आधार सम-सम्भावना सिद्धान्त (normal probability theory) है।

मूल प्राप्तांक तथा व्युत्पन्न प्राप्तांक (Raw Scores and Derived Scores)

मूल प्राप्तांक अपने में अर्थहीन होते हैं। उनकी कोई उपयोगिता नहीं होती। साधारणतया: एक परीक्षा द्वारा प्राप्त परिमापांक की दूसरी परीक्षा द्वारा प्राप्त परिमापांक से तुलना नहीं की जा सकती। उदाहरणार्थ, एक विद्यार्थी की स्टेनफोर्ड बिने परीक्षा द्वारा प्राप्त I.Q. 120 है और प्रोग्रेसिव मैट्रिसिस द्वारा प्राप्त परिमापांक 85 है तो यह नहीं कहा जा सकता कि किसमें उसकी बुद्धि प्रखर है, क्योंकि दोनों परीक्षाओं की मापक इकाइयाँ भिन्न हैं। इसी प्रकार, हम उपरोक्त दोनों प्राप्त परिमापाँकों (obtained scores) को जोड़ भी नहीं सकते। यह समस्या ठीक वैसी ही है, जैसी गणित में 3/4, 2/3, 1/5 को जोड़ने की, जिनको बिना सबका हर समान किये सीधे नहीं जोड़ा जा सकता। सबका हर समान कर लेने पर उनको इन परिवर्तित अथवा व्युत्पन्न भिन्नों 45/60, 40/60, 12/60 के रूप में लिखा जा सकता है। ऐसा कर लेने पर फिर उनको सीधे जोड़ा भी जा सकता है और उनकी परस्पर तुलना भी की जा सकती है। ऐसे ही समान हर (common denominator) की आवश्यकता मानसिक परीक्षाओं के परिमापाँकों की तुलना करने तथा उनको परस्पर जोड़ने में भी पड़ती है। अतः "व्युत्पन्न परिमापाँक किसी व्यक्ति के कार्य सम्पादन का संख्यात्मक विवरण है, जो सामान्यक पर आधारित होता है।"[1] किसी समूह विशेष के कार्य सम्पादन का संख्यात्मक विवरण ही उसके सामान्यक होते हैं जिनको कई ढंगों में व्यक्त किया जाता है। इस प्रकार, व्युत्पन्न परिमापाँक इस बात की ओर संकेत करता है कि सम्पूर्ण समूह में किसी व्यक्ति की क्या स्थिति (position) है।

व्युत्पन्न परिमापाँकों की क्रिया को साँख्यिकी में अनुमापन (scaling) अथवा परिमापाँकों का रूपान्तर (transformation of scores) भी कहा जाता है। **फर्ग्यूसन** के अनुसार, "परिमापाँकों का रूपान्तरण संख्यात्मक निरीक्षण फलों की राशियों में ऐसा क्रमबद्ध परिवर्तन कर देना है कि जिससे उनकी कुछ विशेषताओं में परिवर्तन हो जाता है तथा कुछ अपरिवर्तित रहती हैं।"[2]

इस सम्बन्ध में अनुमापन (scaling) अथवा परिमापाँकों के रूपान्तरण को व्यक्त करने के मुख्यतः निम्नलिखित प्रकार हैं—

1 सिगमा या जैड़ प्राप्तांक (Sigma or Z -scores)

Imp M=0 SD=1

ये परिमापाँक मौलिक परिमापाँकों (original scores) को सिग्मा अनुमाप (σ-scale) की इकाइयों में परिवर्तित कर देने पर प्राप्त होते है। सिग्मा स्केल का औसत (Mean) सदैव शून्य होता है या वह स्केल के ठीक बीच में स्थित रहता है। यह शून्य (zero) ही स्केल की इकाइयों का अभ्युद्देश्य बिन्दु (point of reference) होता है। इसके ऊपर-नीचे दोनों ओर σ-इकाइयाँ रहती हैं जो नीचे ऋणात्मक (negative) तथा ऊपर धनात्मक (positive) चिन्हों द्वारा व्यक्त की जाती हैं। सम्पूर्ण स्केल की लम्बाई 3 σ होती है जिसमें σ सदैव समेक (unity) अर्थात् 1.0 रहता है। अग्र के चित्र से यह स्पष्ट हो जायगा—

---

1. "A derived score is a numerical description of a pupil's performance in terms of norms."
—*'Measurement in Today's Schools'—Ross, Chapter 1*

2. "A transformation is any systematic alteration in a set of observations whereby certain characteristics of the set are changed and other characteristics remain unchanged."
—*'Statistical analysis in Psychology and Education'—A. Furguson, Chapter 14*

Scanned by TapScanner

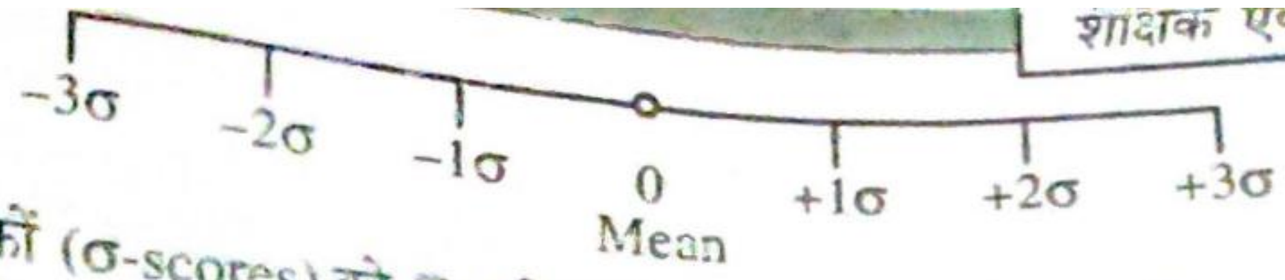

σ - परिमापाँकों (σ-scores) को Z- परिमापाँक (Z-scores) अथवा संक्षिप्त परिमापाँक (reduc scores) भी कहते हैं। Z-परिमापाँक वितरण के मानक विचलन (SD) के आधार पर मध्यमान से व्य के प्राप्ताँकों की दूरी व्यक्त करते हैं। दूसरे शब्दों में, यह इंगित करते हैं कि प्राप्त किये गये मूल प्राप्त किसी वितरण के मध्यमान से कितने मानक विचलन (SD) विचलित हैं। Z-प्राप्ताँक ज्ञात करने के लि निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है—

$$Z = \frac{X - M}{\sigma}$$

जहाँ, X = मूल प्राप्तांक

M = मूल प्राप्ताँकों का मध्यमान

σ = मूल प्राप्ताँकों का मानक विचलन

उदाहरणार्थ, मान लीजिये मीनू को गणित की 8 वीं कक्षा की परीक्षा में 55 अंक प्राप्त होते और विद्यार्थियों के पूरे समूह अथवा कक्षा का मानक विचलन (SD) 10 है तथा औसत 40 है तो स्केल के अनुसार स्केल पर उसकी स्थिति औसत से $\frac{X-M}{\sigma} = \frac{55-40}{10} = \frac{15}{10} = 1.5\sigma$ ऊपर है अर्थात् σ - स्केल में रूपान्तरण करने पर उसका प्राप्तांक + 1.5σ होगा। इसी प्रकार, मोहिनी को की किसी दूसरे स्कूल की 8 वीं कक्षा की परीक्षा में 65 अंक प्राप्त होते हैं, जबकि उस स्कूल के कक्षा के प्राप्ताँकों का औसत 50 तथा (SD) 15 है। देखने पर लगता है कि मोहिनी के प्राप्तांक मीनू प्राप्ताँकों से अधिक हैं, लेकिन σ- परिमापाँकों में रूपांतरण करने पर स्थिति बदल जायेगी। दूसरे शब्दों में, मोहिनी का σ- परिमापाँक 65 –50/15 = 1σ होगा जो मीनू के 1.5 σ से नीचे है। अतः मीनू गणितीय योग्यता मोहिनी से अधिक अच्छी है।

परिभाषा के रूप में, सिग्मा प्राप्तांक को **जेम्स ड्रेवर (James Drever)** के शब्दों में इस प्र व्यक्त किया जा सकता है—"Z-प्राप्तांक σ के रूप में व्यक्ति का वह प्राप्तांक है जहाँ मूल प्राप्तांक मध्यमान को घटाकर व्यक्ति का विचलन प्राप्तांक ज्ञात कर लिया जाता है एवं फिर मानक विचलन (S से उस विचलन प्राप्तांक को भाग देकर Z-प्राप्तांक या σ- प्राप्तांक ज्ञात कर लिया जाता है। (Sig score in terms of sigma is that deviation from the mean divided by σ with sign pl minus according as it is above or below the mean)

इन रूपान्तरित σ-परिमापाँकों के साथ एक असुविधा यह होती है कि वे धनात्मक तथा ऋण दोनों आते हैं जिसके फलस्वरूप उनके प्रयोग में कठिनाई उत्पन्न होती है तथा समझने में भी असुविध है। साथ ही, इनके मान दशमलव भिन्नों में आते हैं जिससे उनके प्रयोग में और भी असुविधा होती है भी, इन प्राप्तांकों का अपना महत्त्व है। **हेण्डरसन (Henderson)** ने इस महत्त्व को स्वीकारते हुए है—"Z-प्राप्तांक के साथ हम निश्चित रूप से यह कह सकते हैं कि किसी भी श्रृंखला में प्रत्येक वित विचलन समरूप होगा एवं कोई भी प्राप्तांक अनावश्यक रूप से अभिनीत मुक्त होगा।"

(With Z-scores we ensure that the deviation of each distribution in the se uniform and no score is unduly biased) इसी तथ्य को **नुनली (Nunnally)** महोदय इस व्यक्त करते हैं—"व्यावहारिक उद्देश्यों के लिये यह बहुधा उपयोगी होता है कि परीक्षण प्राप्तांकों प्राप्तांकों में रूपान्तरित कर व्यक्त करें।" (Fore practical purposes it is usually advant that the test scores may be expressed in converting Z-Scores)

Scanned by TapScanner

2 प्रमाप अंक (Standard Scores)

σ-परिमापाँकों की उपरोक्त असुविधाओं को दूर करने के लिये उनको एक दूसरे स्केल के माध्यम से बदल कर लिखा जाता है। इन रूपान्तरित σ-परिमापाँकों को प्रमाप अंक (standard scores) कहते हैं। प्रमाप अंकों (standard scores) की स्थिति में σ-परिमापाँकों के M तथा S.D. जो क्रमशः 0 तथा 1 होते हैं, को बदल कर उनके स्थान पर ऐसे M तथा S.D. रख लिये जाते हैं कि उनके द्वारा जो रूपान्तरित परिमापाँक आते हैं वे सदा पूर्णांक होते हैं तथा सभी धनात्मक होते हैं। यही प्रमापाँक (Standard Scores) कहलाते हैं। प्रमापाँकों के M तथा S.D. कुछ भी हो सकते हैं। कभी M = 100, SD = 15 तो कभी M = 50, SD = 10 रख लिया जाता है। यह सुविधा सामग्री (data) पर निर्भर करती है। **आर्मी जनरल क्लासिफीकेशन टेस्ट** के परिमापाँक (scores) ऐसे प्रमापाँकों (standard scores) में व्यक्त किये जाते हैं जिनके वितरण का M =100 तथा SD = 20 होता है। इसी प्रकार **वैच्सलर बैलुवी बुद्धि परीक्षा** के परिमापाँकों को भी प्रमापाँकों में व्यक्त किया गया है। किन्तु इन परिमापाँकों के M तथा SD क्रमशः 10 तथा 3 होते हैं। **ग्रेजुएट रेकार्ड एक्जामीनेशन** के प्राप्तांकों को जिन प्रमापाँकों (standard scores) में बदला जाता है उनके M तथा SD क्रमशः 500 और 100 होते हैं।

प्राप्ताँकों को प्रमापाँकों (standard scores) में बदलने का सूत्र निम्नलिखित है—

$$X = \frac{\sigma_X}{\sigma_Y}(Y - M_Y) + M_X$$

जहाँ, X = प्रमापाँक (standard scores)

σ_X = मानक विचलन प्रमापाँक का

σ_Y = मानक विचलन (प्राप्त मूल अंकों का)

Y = प्राप्तांक (जिसे प्रमापाँक में रूपान्तरित करना है)

M_Y = औसत (प्राप्त मूल अंकों का)

M_X = औसत (प्रमापाँकों का जिनमें प्राप्ताकों को बदलना है)

उदाहरणार्थ, मान लीजिये एक परीक्षा के प्राप्ताँकों के वितरण का $M = 90, SD = 15$ तथा उसमें एक विद्यार्थी अनुभव के प्राप्ताँक 66 हैं तथा अनुराग के 116 हैं तो अनुभव तथा अनुराग दोनों के प्राप्ताँकों को ऐसे प्रमापाँकों में बदलो जिनका $M = 100$ तथा $SD = 20$ है।

ज्ञात है,
$$X = \frac{\sigma_X}{\sigma_Y}(Y - M_Y) + M_X$$

अतः अनुभव का प्राप्ताँक
$$= \frac{20}{15}(66 - 90) + 100$$
$$= \frac{4}{3}(-24) + 100$$
$$= -32 + 100 = 68$$

इसी प्रकार, अनुराग का प्रमापाँक
$$= \frac{20}{15}(116 - 90) + 100$$
$$= \frac{4}{3}(26) + 100$$
$$= \frac{104}{3} + 100$$
$$= 34{\cdot}6 + 100$$
$$= 134{\cdot}6$$

Scanned by TapScanner

3 टी परिमापाँक (T-Scores)

Z-परिमापाँकों की एक मुख्य सीमा यह होती है कि इनमें दशमलव चिन्हों तथा ऋणात्मक एवं धनात्मक चिन्हों की असुविधा के कारण तुलनात्मक अध्ययन करना कठिन हो जाता है। साथ ही σ-स्केल इस उपकल्पना (Hypothesis) पर आधारित है कि जिस अंक वितरण को σ-स्केल में परिवर्तित किया गया है वह सम-वितरित (normally-distributed) है। परन्तु बहुत-सी बार ऐसा नहीं होता। अतः उस सामग्री में जिसका वितरण सम (*normal*) नहीं है, σ-स्केल यथार्थ नहीं होता। इन सीमाओं के कारण ऐसी स्थिति में टी—परिमापाँकों का प्रयोग अधिक उपयोगी रहता है। टी-स्केल में इस दोष को दूर करने के लिये पहले आवृत्ति वितरण (frequency distribution) को समनिष्ठ (normalized) कर लिया जाता है, फिर उनका अनुमापन (scaling) किया जाता है। इसीलिये, टी-परिमापाँकों को प्रसामान्यीकृत प्रमापाँक (normalized standard scores) कहते हैं, जिनका मापनी पर औसत (Mean) = 50 तथा मानक विचलन (SD) = 10 होता है। टी-स्केल की खोज मैककाल (Mc Call) ने की थी। उन्होंने प्रारम्भिक (elementary) कक्षाओं के लिये पढ़ने की मनोवैज्ञानिक परीक्षाओं के बनाने में सबसे पहले टी-स्केल का प्रयोग किया था। प्रथम टी-स्केल का आधार 12 वर्षीय 500 विद्यार्थियों के अर्जित पठन-परिमापाँक (Reading Scores) थे। उसके पश्चात् टी-स्केल का प्रयोग भिन्न-भिन्न प्राप्तांकों, कक्षाओं तथा अवस्थाओं को लेकर किया गया है।

टी-स्केल का प्रयोग सामान्यतः तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से किया जाता है, जिसका सम्बन्धित सूत्र अग्र प्रकार है—

$$T = 50 + 10\,\frac{(X-M)}{\sigma}$$

or, $T = 50 + 10Z$

जहाँ, X = व्यक्ति का मूल प्राप्तांक

M = समूह का औसत प्राप्तांक

σ = प्राप्तांकों के वितरण का मानक विचलन

उदाहरणार्थ, मान लीजिये किन्हीं दो परीक्षणों के मध्यमान तथा मानक विचलन इस प्रकार हैं—

	Test A	Test B
मध्यमान	65	50
मानक विचलन	15	10

अब, मान लीजिये मीनाक्षी को परीक्षण 'A' में 70 अंक तथा परीक्षण 'B' में 60 अंक मिलते हैं तो उसके टी-प्राप्तांक निम्न होंगे—

Test A

$$T = 50 + 10\,\frac{(70-65)}{15}$$
$$= 50 + 10 \times .3$$
$$= 50 + 3$$
$$= 53$$

Test B

$$T = 50 + 10\,\frac{(60-50)}{10}$$
$$= 50 + 10 \times 1$$
$$= 50 + 10$$
$$= 60$$

उपरोक्त दोनों T-scores की तुलना के आधार पर हम कह सकते हैं कि मीनाक्षी की योग्यता परीक्षण 'B' में अधिक है।

टी-परिमापाँकों की शैक्षिक परिमाप के क्षेत्र में बड़ी उपयोगिता है। वास्तव में टी-परिमापाँक प्राप्तांकों (raw scores) के शताँशीय मान (percentiles) ही हैं। यदि 75 प्राप्तांक का टी-परिमापाँक 60 हो तो इसका अर्थ होगा कि 60% विद्यार्थी 75 से कम तथा 40% विद्यार्थी 75 से अधिक अंक प्राप्त करते हैं।

Scanned by TapScanner

टी-परिमापाँकों का प्रयोग बहुत-सी परिस्थितियों में किया जा सकता है। टी-परिमाप मापन (measurement) की एक अत्यन्त सुविधाजनक एवं उपयुक्त इकाई है। उसके द्वारा योग्यता अथवा क्षमता के बहुत बड़े विस्तार (wide range of talent) का परिमापन किया जा सकता है, क्योंकि उसकी इकाइयों का विस्तार 0 से 100 तक रहता है।

विभिन्न परीक्षाओं के प्राप्ताँकों को टी-परिमापाँकों में बदल देने पर वे एक ही स्केल तथा समान इकाइयों में बदल जाते हैं। अतः उनकी परस्पर तुलना की जा सकती है और उनको जोड़ा भी जा सकता है।

टी-परिमापाँकों के महत्त्व को स्वीकारते हुए **गैरिट (Garrett)** महोदय लिखते हैं—"T-Scores have general applicability, a convenient unit and they cover a wide range of talent. Besides these advantages, T-Scores form different tests of comparability and have the same meaning since reference is always to a standard of 100 units based upon N.P.C."

उपरोक्त विशेषताओं के बावजूद टी-परिमापाँकों में एक दोष भी होता है और वह यह है कि एक प्राप्तांक-वितरण जो सम-वितरित (normally distributed) नहीं है उसे भी झूठ-मूठ सम-वितरित मान लिया जाता है।

4 H-प्राप्ताँक (Hull Scores)

$M_H = 50$
$SD_H = 14$

H-प्राप्ताँक, T-प्राप्ताँक के समान हैं। अन्तर केवल यह है कि T-प्राप्ताँक में जहाँ Z-प्राप्ताँकों को 10 से गुणा किया जाता है, वहाँ H-प्राप्ताँक के लिये Z-प्राप्ताँक में 14 से गुणा की जाती है। इस प्रकार H-प्राप्ताँक प्राप्त करने का रूपान्तरित सूत्र निम्न हो जाता है—

$$H = 50 + 14Z$$

जहाँ,

$$Z = \frac{X - M}{\sigma}$$

5 C-प्राप्ताँक (C-Scores)

$M_C = 5$
$SD_C = 2$

C-परिमापाँक भी T-परिमापाँक की भाँति सामान्यीकृत मानक प्राप्ताँक (standard normalized scores) हैं। इनका प्रतिपादन **जे० पी० गिलफर्ड (J.P. Guilford)** ने किया। इस C-स्केल के अन्तर्गत मापनी के प्राप्ताँकों का प्रसार 0 से 10 तक होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि मूल परिमापाँकों का प्रसार (range) कुल 11 इकाइयों में विभक्त होता है, जिसका औसत $(M) = 5$ तथा मानक विचलन $(SD) = 2$ होता है।

C तथा T-परिमापाँक निम्न समीकरण के रूप में एक दूसरे से सम्बन्धित रहते हैं—

$$T = 5C + 25$$

or,

$$C = .2T - 5$$

C-परिमापाँकों की मुख्य सीमा यह है कि इन्हें दो अंकों 0-1, 1-2 के रूप में लिखा जाता है, अतः कम्प्यूटर से गणना करते समय पंच कार्ड में दो कॉलम (column) की जरूरत पड़ती है जिससे इसका प्रयोग अधिक खर्चीला हो जाता है।

6 स्टेन प्राप्ताँक (Sten-Scores)

$M_S = 5.5$
$SD_S = 2$

मौलिक परिमापाँकों (original scores) को स्टेन-परिमापाँकों में रूपान्तरित करने का श्रेय **आर० बी० कैटिल** को जाता है। इस स्टेन-मापनी पर व्यक्ति 1 से 10 तक अंक प्राप्त कर सकता है जिसका औसत प्राप्ताँक 5.5 होता है। परिभाषा के रूप में हम कह सकते हैं कि—"ये वे प्रतिमान सामान्यीकृत

प्राप्ताँक हैं जिनका मध्यमान 5.5 तथा मानक विचलन 2 होता है।" (Sten scores are standard normalized scores with a Mean 5.5 and S.D. equal to 2)

सूत्र रूप में, स्टेन-परिमापाँक निम्न प्रकार व्यक्त किये जा सकते हैं—

$$\text{स्टेन प्राप्ताँक} = 5.5 + 2\,\frac{(X-M)}{\sigma}$$

$$= 5.5 + 2\,Z$$

or

स्टेन-परिमापाँकों को शतांशीय (percentiles) में भी रूपान्तरित किया जा सकता है जिससे यह ज्ञात हो सके कि अमुक व्यक्ति का 100 व्यक्तियों में क्या स्थान है ?

$M_{st} =$

$SD_{st} =$

7 स्टेनाइन-प्राप्ताँक (Stanine Scores)

स्टेनाइन परिमापाँक स्टेनाइन स्केल द्वारा प्राप्त होते हैं। स्टेनाइन स्टेन्डर्ड नाइन STANDARD NINE का ही संक्षिप्त रूप है। टी-स्केल की इकाइयाँ 0 से 100 तक होती हैं, स्टेनाइन में 1 से 9 तक। अतः स्टेनाइन एक प्रकार से टी-स्केल का ही संक्षिप्त रूप है। दोनों के निर्माण का आधार सम-सम्भावना वक्र (NPC) है। स्टेनाइन स्केल में एक इकाई .5 σ होती है। स्टेनाइन अनुमाप में समवक्र (normal curve) के क्षेत्रफल को 9 श्रेणियों में बाँट देते हैं। प्रत्येक श्रेणी में क्षेत्रफल के भिन्न-भिन्न प्रतिशत आँकड़े आते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि स्टेनाइन का प्रसार 1 (निम्नतम) से 9 (उच्चतम) तक होता है तथा इस स्केल का औसत (M) सदैव 5 होता है। न्यूनतम स्टेनाइन का अर्थ है वे व्यक्ति जो इस स्टेनाइन में सम्मिलित हैं, समूह में निम्नतम अंक पाने वाले व्यक्ति हैं। इसी प्रकार उच्चतम स्टेनाइन का अर्थ है वे व्यक्ति जो इस स्टेनाइन में सम्मिलित हैं, समूह में उच्चतम अंक पाने वाले व्यक्ति हैं। यह मापनी सम-इकाइयों (equal units) को व्यक्त करती है, उदाहरणार्थ-स्टेनाइन 6 एवं 7 में वही अन्तर होगा जो कि 3 व 4 में है।

सूत्र रूप में, स्टेनाइन प्राप्ताँक को निम्न प्रकार व्यक्त किया जा सकता है—

$$\text{स्टेनाइन प्राप्ताँक} = 5 + 2\,\frac{(X-M)}{\sigma}$$

or, $5 + 2\,Z$

स्टेनाइन 9 एवं स्टेनाइन 1 को छोड़कर सभी स्टेनाइन .50σ के बराबर होते हैं, जैसे—स्टेनाइन 5 में वे व्यक्ति आयेंगे जो *M* व ± .25σ के बीच आते हैं। यही बात **सीशोर** (***Seashore***) ने अपने लेख '***Recent Trends in Psychology***' में इस प्रकार व्यक्त की है—"Except for stanine 9, the top and stanine 1, the bottom, these groups are spaced in half-sigma units. Thus, stanine 5 is defined as including the people who are within ± .25σ of Mean. Stanine 6 is the group defined by the half-σ distance on the baseline between +.25and +.75σ. Stanines 1 and 9 include all persons who are below -1.75σ and above + 1.75σ respectively."

मूल प्राप्ताँकों को स्टेनाइन में रूपान्तरित करने की सरल विधि यह है कि प्राप्ताँकों को उनके विस्तार के अनुसार व्यवस्थित किया जाता है तथा NPC में निम्न प्रतिशत के आधार पर उन्हें स्टेनाइन प्रदान किया जाता है।

तालिका

प्रतिशत	4	7	12	17	20	17	12	7	4
स्टेनाइन	1	2	3	4	5	6	7	8	9

अब, मान लीजिये किसी समूह में 100 व्यक्ति हैं, तो उसमें से निम्नतम अंक पाने वाले 4 व्यक्तियों को 1 स्टेनाइन प्राप्त होगा, उससे ऊपर के 7 व्यक्तियों को 2 , उससे ऊपर 12 व्यक्तियों को 3, उससे ऊपर 17 व्यक्तियों को 4 आदि-आदि।

स्टेनाइन स्केल की मुख्य विशेषताएँ निम्न हैं—

(1) स्टेनाइन स्केल का निर्माण आसान होता है तथा उसमें अधिक समय भी नहीं लगता।

(2) स्टेनाइन को समझना तथा उनकी व्याख्या करना सरल होता है।

(3) स्टेनाइन, योग्यता अथवा क्षमता की समान इकाइयों का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनका पारस्परिक अन्तर आरम्भ से अन्त तक बराबर होता है, अर्थात् 9-8 = 8-7 = 7-6 = 6-5 = 5-4 = 4-3 = 3-2 = 2-1। अतः उनको जोड़ा जा सकता है और भिन्न-भिन्न परीक्षाओं के स्टेनाइन की परस्पर तुलना भी की जा सकती है।

(4) स्टेनाइन अधिक विश्वसनीय (reliable) होते हैं।

(5) टी-स्केल की अपेक्षा स्टेनाइन स्केल काफी संक्षिप्त होता है।

उपरोक्त विशेषताओं को निश्चित शब्दों में **ऐडम्स (Adams)** ने इस प्रकार व्यक्त किया है "परीक्षण पद्धत के विवेचन में स्टेनाइन के प्रयोग को बहुधा प्राथमिकता दी जाती है। इस विधि का प्रयोग व्यक्तिगत चयन तथा शैक्षिक निर्देशन में भी उपयोगी होता है।"

8 शताँशीय परिमापाँक (Percentiles)

शतांशीय, मापनी पर एक ऐसा बिन्दु है जिसके नीचे वितरण का एक निश्चित प्रतिशत आता है। उदाहरणार्थ, यदि किसी व्यक्ति को एक परीक्षण पर 35वां शतांशीय क्रम (percentile rank) प्राप्त होता है तो इसका अर्थ है कि वह व्यक्ति समूह में 35% व्यक्तियों से ऊपर है। दूसरे शब्दों में, शतांशीय क्रम वितरण में किसी विशेष प्राप्ताँक की शतांशीय स्थिति को दर्शाता है। इसी प्रकार यदि 60% विद्यार्थी 33 से कम अंक प्राप्त करते हैं तो 33 मूल प्राप्ताँक को 60वां शतांश (P_{60}) के रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है।

एनेस्टेसी **(Anastasi)** के शब्दों में, "Not only do percentiles show where the individual stands in the normative sample but they are also useful in comparing the individual's own performance on different tests."

शतांशीय क्रम ज्ञात करने के लिये निम्न सूत्र प्रयोग में लाया जाता है—

$$X_p = L + \frac{i}{f}\left(\frac{PN}{100} - T\right)$$

जहाँ, X_p = शतांशीय क्रम के समान परीक्षण-प्राप्ताँक

$L = X_p$ पड़ने वाले वर्गान्तर की निम्न सीमा

i = आवृत्ति वितरण में वर्गान्तर का आकार

$f = X_p$ पड़ने वाले वर्गान्तर में आवृत्तियाँ

N = प्राप्ताँक योग

T = निम्न सीमा तक आवृत्तियों का योग

सामान्यतः सम्भावना वक्र (NPC) की सहायता से भी शतांश बिन्दु (Percentile point) में प्रतिशत क्या होता है तथा यह ज्ञात किया जाता है कि निम्नतम अमुक प्रतिशत किस बिन्दु या प्राप्ताँक पर

आता है। उदाहरणार्थ, यदि किसी NPC में M = 100 तथा σ = 10 हो तो इस स्थिति में P_{70} की मान का मान निम्न होगा—

$$P_{70} = M + .52\sigma \text{ (70 means 50 + 20 i.e., 2000 } \sigma \text{ value)}$$
$$= 100 + .52 \times 10$$
$$= 100 + 5.20$$
$$= 105.20$$

अतः हम कह सकते हैं कि 105.20 वह प्राप्तांक है जिसके नीचे वितरण के 70 प्रतिशत विद्या आते हैं। इसी प्रकार P_{40}, P_{60}, P_{80} आदि की गणना भी इसी आधार पर की जा सकती है।

शतांश बिन्दु की भाँति शताँशीय क्रम में भी अंक दिया होता है तथा यह ज्ञात करना होता है उस अंक के नीचे कितने प्रतिशत व्यक्ति आते हैं। उदाहरणार्थ, यदि किसी NPC में M = 65 तथा σ = 10 हो तो इस स्थिति में PR 75 की गणना निम्न प्रकार की जायेगी—

$$Z = \frac{(X - M)}{\sigma}$$

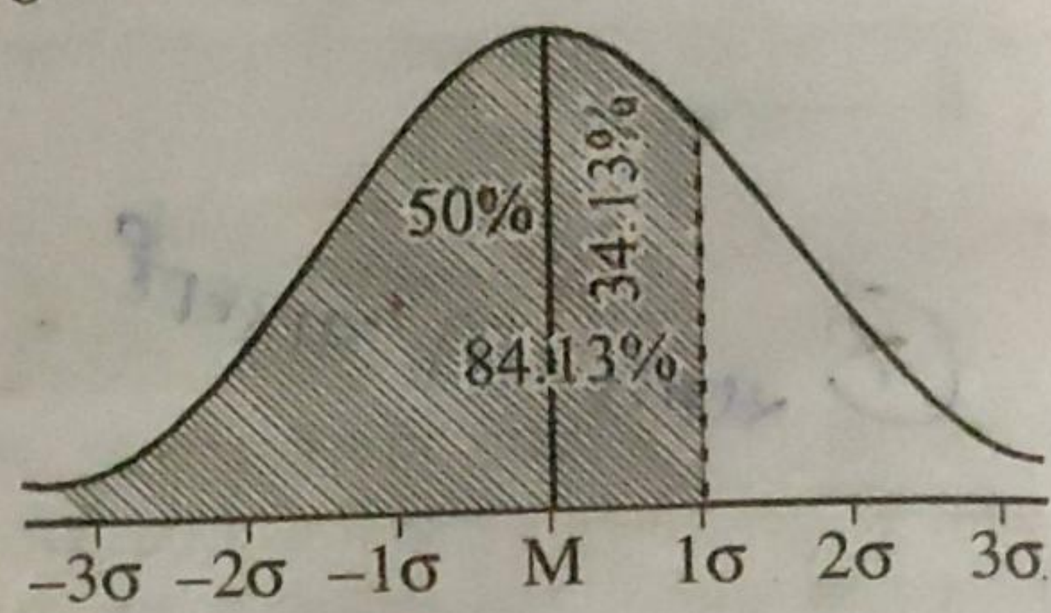

$$= \frac{75 - 65}{10}$$
$$= \frac{10}{10}$$
$$= 1\sigma = 34.13\%$$

अर्थात्, 50 + 34.13% = 84.13%

अतः हम कह सकते हैं कि वह व्यक्ति जो 75 अंक प्राप्त करता है, अपने समूह में 84 अर्थात्, लगभग 84% विद्यार्थियों से ऊपर है।

संक्षेप में, शततमक स्केल की प्रमुख विशेषताएँ निम्न हैं—

(1) शतांशीय प्राप्तांकों की गणना सरलता से की जा सकती है।

(2) इन्हें समझने के लिये किसी विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं पड़ती।

(3) ये प्राप्तांक बच्चों एवं वयस्कों दोनों के लिये समान रूप से उपयोगी हैं।

(4) ये प्राप्तांक अन्य प्राप्ताँकों की तुलना में परीक्षण के क्षेत्र में बहुलता से प्रयोग किये जाते

(5) इन प्राप्ताँकों का प्रयोग विद्यार्थी की उसके समूह में सापेक्षिक स्थिति ज्ञात करने में जाता है।

क्रौनबैक (Cronback) ने इन प्राप्ताँकों के महत्त्व को स्वीकारते हुए लिखा है—"It magn small differences in score near the mean which may not be significant and it red the apparent size of large differences in score near the tail of distribution."

उपरोक्त विशेषताओं के होते हुए भी इस स्केल की कुछ सीमाएँ हैं, जो निम्न हैं—

(1) इन प्राप्तांकों की सार्थकता साँख्यिकी का तकनीकी ज्ञान रखने वालों के लिये है। विद्यार्थी तथा उनके अभिभावकों की समझ के वे परे होते हैं। उनके लिये तो अंक ही अधिक अर्थपूर्ण होते हैं। एक विद्यार्थी ने 100 में 75 अंक प्राप्त किये, यह उनके लिये अधिक सुबोध एवं सार्थक है, P_{70} अथवा P_{80} की अपेक्षा। अपनी कक्षा में कोई विद्यार्थी कितनों से अच्छा या बुरा है इसमें अभिभावकों की रुचि इतनी अधिक नहीं होती जितनी 100 में कितने अंक उसने प्राप्त किये इसमें होती है।

(2) इस स्केल की सब इकाइयाँ बराबर नहीं होतीं। P_{50} के आसपास अर्थात्, स्केल की मध्यस्थ इकाइयाँ सबसे छोटी होती हैं तथा आरम्भ एवं अन्त में स्केल के दोनों छोरों पर शततमक इकाइयाँ बड़ी होती हैं। अतः भिन्न परीक्षाओं के अंक वितरण की शततमक इकाइयों को जोड़ने पर परिणाम गलत हो जाते हैं। सिद्धान्ततः उनको जोड़ा जा सकता है, परन्तु जोड़ने पर कभी-कभी दोष उत्पन्न हो जाता है। उदाहरणार्थ, P_{90} व P_{80} के बीच जो अन्तर है वह P_{60} तथा P_{50} के अन्तर से अधिक है—

$$P_{90} = +1.28\sigma$$
$$P_{80} = .84\sigma$$

अन्तर $= .44\sigma$

तथा $P_{60} = +.25\sigma$
$$P_{50} = +.00\sigma$$

अन्तर $= .25\sigma$

स्पष्ट है कि छोरों पर इकाइयों का अन्तर अधिक होता है। फिर भी, निष्कर्षतः मूल्यांकन के क्षेत्र में शततमक स्केल का अपना अलग ही महत्त्व है।

9 विचलन बुद्धि-लब्धि प्राप्तांक (Diviation I.Q. Scores)

विचलन बुद्धि-लब्धि प्राप्तांक (Deviation I.Q. Scores) के प्रत्यय का सर्वप्रथम प्रयोग वैश्लर (Wechsler) ने अपनी बालक एवं वयस्क बुद्धि-मापनी में किया। स्टेनफोर्ड-बिने मापनी (Stanford-Binet Scale) 1960 में भी इस स्केल का प्रयोग किया गया था। इस स्केल को I.Q. Equivalent के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है जिसका M = 100 तथा SD = 15 माना जाता है। इसके प्रयोग के पीछे यह मान्यता निहित है कि व्यक्ति की बुद्धि-लब्धि का विश्लेषण करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि व्यक्ति का अंक अपनी आयु समूह के मध्यमान से कितना विचलित होता है।

एडम्स (Adams) के शब्दो में, "The Deviation I.Q.....a normalized standard score is now becoming more widely used....According to this procedure the score earned by each student on an intelligence test is simply compared with the scores of other students of his own age. His position is ascertained in a normal distribution for his own age or group and that position (actually, a standard score) is translated into an intelligence quotient."

सामान्यतः सभी आयु स्तरों पर I.Q. का मानक विचलन (*SD*) हमेशा समान नहीं होता। इससे I.Q. के सापेक्षिक अर्थ के विश्लेषण में कठिनाई होती है। मान लीजिये, किन्हीं भी तीन आयु-स्तरों पर मानक विचलन क्रमशः 12, 16 तथा 18 हैं तथा I.Q. क्रमशः 88, 84 तथा 82 हैं। इन तथ्यों के आधार पर एक सामान्य व्यक्ति बिना मानक विचलन को ध्यान में रखे यह निष्कर्ष निकालेगा कि पहला व्यक्ति जिसकी I. Q. 88 है, शेष दो व्यक्तियों से श्रेष्ठ है। दूसरी स्थिति में, यदि मानक विचलन को ध्यान में रखकर I.Q. का विश्लेषण किया जाय तो निष्कर्षतः हम कहेंगे कि तीनों व्यक्ति ही अपने-अपने आयु

समूह में समान योग्यता रखते हैं, क्योंकि NPC में तीनों की स्थिति – 1σ होगी तथा तीनों के ही क्रम (PR) का मान 16 होगा।

$$Z = \frac{X - M}{\sigma} = \frac{88 - 100}{12} = \frac{-12}{12} = -1\sigma$$

and,

$$Z = \frac{82 - 100}{18} = -\frac{18}{18} = -1\sigma$$

क्योंकि –1σ पर 34.13% विद्यार्थी आते हैं अतः उससे नीचे 50-34.13 = 15.87% 16% व्यक्ति होंगे।

इन प्राप्तांकों के महत्व के सम्बन्ध में **गुडएनफ (Goodenough)** लिखते हैं—

"This fact has suggested the possibility of reducing standard scores to ... which have numerical values similar to those of I.Q.'s but which because of ... method by which they are derived have fewer statistical limitations and haz... except with the modern way of deriving T-scores... .... It will be noted that ... this method is used deviations are automatically made equal at all stages ... accordingly the significance of given I.Q. is equal at all ages."

उपरोक्त विभिन्न प्रतिमान प्राप्तांकों के मध्य आपसी सम्बन्ध को सामान्य वक्र (normal ... के माध्यम से चित्र रूप में अग्र प्रकार प्रदर्शित किया जा सकता है—

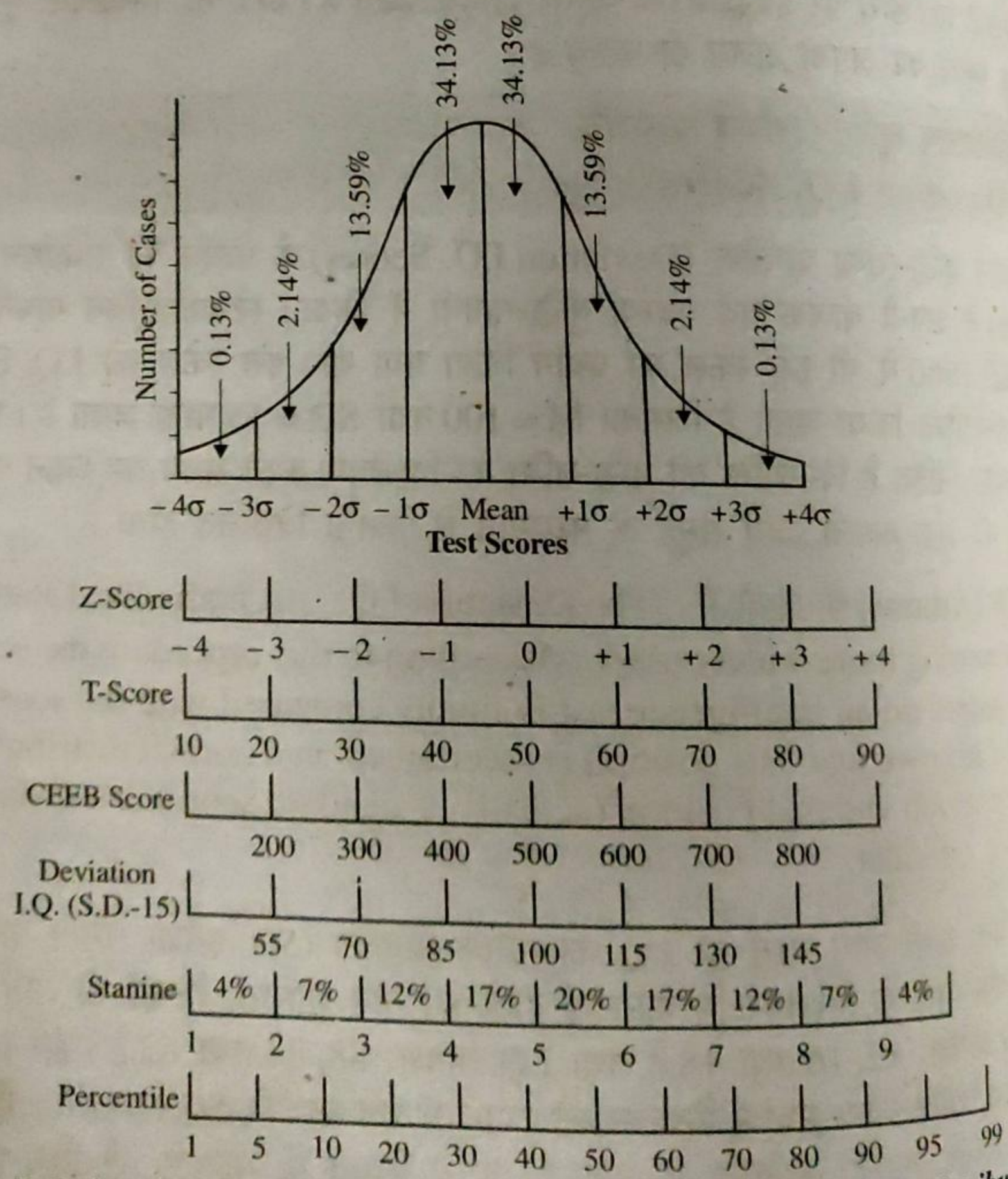

Fig. Relationship among different types of test scores in a normal distribution